मेरी नज़र में धर्म

नियंत्रित आचरण ही धर्म है

मनुष्य एक विचारशील प्राणी है जो अधिकतर समाज में रहता है। उसकी दो अपेक्षाएँ रहती हैं:-

१) उसे मानसिक संतोष मिले।

२) उसे समाज में सुख से रहने को मिले।

पहली अपेक्षा उसे अंतर्मुख करती है, दूसरी बहिर्मुख। इन दोनों बातों में जो विचार एवं क्रियाएँ उसका मार्गदर्शन कर सकें वही मेरे विचार से 'धर्म' हैं। समाज में अपने पड़ोसियों से, पूरे जनसमुदाय के प्रति जिम्मेदारी रखते हुए वह कैसे व्यवहार करे यह बतानेवाली आचारसंहिता ही धर्म है। और केवल धनराशि या अधिकार से परे ऐसी क्या मंत्रणाएँ हैं जो मन को संतुष्ट रखती हैं, इस बात की जानकारी देने वाला ही धर्म है।

धार्मिक होने का मतलब पूजापाठ करना या भगवान का नाम लेना नहीं है। सामाजिक जिम्मेदारियां निभाते हुए अपने आचरण पर ऐसे नियंत्रण लगाना जिससे स्वयं को सुख संतोष मिले पर औरों को कष्ट न हो यही सच्चा धर्माचरण है।

ऐसा धर्माचरण सरल नहीं है पर एक आदर्श है जिसकी ओर चलना हमारा कर्तव्य है।

जयंत नार्लीकर